Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
January to March 2026, E-Journal, Vol. I, Issue LIII (53), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारतीय ज्ञान परंपरा और पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य का दर्शन: एक युगांतरकारी विश्लेषण

डॉ. हर्षा त्रिवेदी *

* अध्येता, भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, राष्ट्रपति निवास, शिमला (हिमाचल प्रदेश) भारत

प्रस्तावना – भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की वह प्राचीनतम जीवन पद्धति है जो केवल सूचनाओं के संग्रह तक सीमित नहीं रही, बल्कि इसने मानव चेतना के उच्चतम शिखर को छूने का मार्ग प्रशस्त किया। इस परंपरा का मूल आधार 'सत्य' की खोज और 'लोक–कल्याण' की भावना है। वेदों से लेकर उपनिषदों तक और दर्शन शास्त्रों से लेकर पुराणों तक, इस ज्ञान का एक ही स्वर रहा है 'एकम सद्विप्रा बहुधा वदन्ति'। बीसवीं शताब्दी के कालखंड में जब भारतीय समाज पाश्चात्य भौतिकवाद और आंतरिक कुरीतियों के दोहरे दबाव में अपनी जड़ों को भूल रहा था, तब पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य एक ऐसे मनीषी के रूप में उभरे जिन्होंने इस प्राचीन ज्ञान परंपरा को आधुनिक तर्कसंगत और वैज्ञानिक ढांचे में ढालकर पुन: जीवित किया। आचार्य जी का दर्शन किसी संकीर्ण संप्रदाय का पोषण नहीं करता, बल्कि वह उस वैदिक ऋषि परंपरा का विस्तार है जो 'वसुधैव कुटुंबकम' के भाव को चरितार्थ करती है। उनके अनुसार, भारतीय ज्ञान परंपरा का वास्तविक अर्थ केवल संस्कृत के श्लोकों का पाठ करना नहीं है, बल्कि उन सिद्धांतों को जीवन में उतारना है जो मनुष्य को पशुत्व से देवत्व की ओर ले जाते हैं। उन्होंने स्पष्ट किया कि भारतीय संस्कृति 'आत्मा' की संस्कृति है, जिसमें पदार्थ और चेतना का अद्भुत संतुलन है। आचार्य जी ने अपने संपूर्ण जीवन और साहित्य में इस बात पर बल दिया कि प्राचीन ऋषियों द्वारा प्रतिपादित 'यज्ञ' और 'गायत्री' केवल कर्मकांड नहीं, बल्कि एक मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक शोध की प्रक्रियाएं हैं। उन्होंने 'वैज्ञानिक अध्यात्मवाद' की नींव रखी, जो इस धारणा को खंडित करती है कि विज्ञान और धर्म परस्पर विरोधी हैं। उनके दर्शन में विज्ञान पदार्थ की शक्ति का अन्वेषण है, तो अध्यात्म अंतरात्मा की शक्तियों का जागरण।

आचार्य जी ने भारतीय ज्ञान परंपरा के उस मर्म को पकड़ा जिसे 'ऋत' कहा जाता है–अर्थात ब्रह्मांडीय व्यवस्था। उन्होंने प्रतिपादित किया कि जब व्यक्ति की विचार प्रक्रिया इस ब्रह्मांडीय व्यवस्था के अनुरूप हो जाती है, तभी वह सुखी और शांत रह सकता है। उनकी 'विचार क्रांति' इसी का एक हिस्सा है, जिसमें उन्होंने माना कि विश्व की समस्त समस्याओं का समाधान मनुष्य के विचारों के परिष्कार में निहित है। उन्होंने प्राचीन ऋषियों की भांति ही यह घोषणा की कि 'हम बदलेंगे–युग बदलेगा', जिसका सीधा अर्थ यह है कि समाज का निर्माण व्यक्तियों से होता है और व्यक्ति का निर्माण उसके विचारों से। उनके दर्शन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष 'नारी जागरण' है। भारतीय ज्ञान परंपरा में जहां प्राचीन काल में गार्गी और मैत्रेयी जैसी विदुषियां थीं, वहीं मध्यकाल में नारी की स्थिति अत्यंत दयनीय हो गई थी। आचार्य जी ने वेदों का प्रमाण देकर यह सिद्ध किया कि गायत्री और यज्ञ पर नारी का भी उतना ही अधिकार है जितना पुरुष का। उन्होंने नारी को 'शक्ति' का पर्याय मानकर उसे समाज की मुख्यधारा में लाने का जो कार्य किया, वह आधुनिक भारत के सामाजिक सुधार आंदोलनों में अद्वितीय है। इसके अतिरिक्त, उन्होंने 'यज्ञीय जीवन' की व्याख्या करते हुए बताया कि यज्ञ का अर्थ केवल अग्नि में आहुति देना नहीं है, बल्कि अपने स्वार्थों का लोक–कल्याण के लिए त्याग करना है। उनकी दृष्टि में वही व्यक्ति धार्मिक है जो अपनी प्रतिभा, समय और धन का एक अंश समाज के उत्थान के लिए समर्पित करता है। उन्होंने आयुर्वेद, मंत्र विज्ञान और योग जैसी प्राचीन विद्याओं को प्रयोगशालाओं में जांचने का आह्वान किया, जिससे आधुनिक पीढ़ी का विश्वास अपनी परंपराओं पर पुन: सुदृढ़ हो सके।

पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य का साहित्य, जो लगभग 3200 से अधिक पुस्तकों में समाहित है, भारतीय ज्ञान परंपरा का एक आधुनिक विश्वकोश है। इसमें उन्होंने ब्रह्मविद्या और जीवविज्ञान का ऐसा समन्वय प्रस्तुत किया है जो आज के तनावग्रस्त और दिशाहीन समाज के लिए एक प्रकाश स्तंभ की तरह है। उन्होंने 'सात क्रांतियों' का आह्वान किया, जिसमें साधना, शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण, स्वावलंबन, नारी जागरण और कुरीति निवारण शामिल हैं। यह सातों क्रांतियां वास्तव में भारतीय ज्ञान परंपरा के उन आदर्शों का व्यावहारिक क्रियान्वयन हैं जो 'सर्वे भवन्तु सुखिन:' के संकल्प को पूरा करते हैं। उनके दर्शन में पर्यावरण संरक्षण को 'वृक्ष गंगा' अभियान के माध्यम से एक आध्यात्मिक कर्तव्य बनाया गया, जो यह दर्शाता है कि भारतीय दृष्टि में प्रकृति निर्जीव भोग की वस्तु नहीं, बल्कि सजीव और पूजनीय इकाई है। वर्तमान वैश्विक संकटों, जैसे जलवायु परिवर्तन और मानसिक अवसाद के दौर में, आचार्य जी का यह दर्शन कि 'मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है', एक नई ऊर्जा प्रदान करता है। उन्होंने स्पष्ट किया कि जब तक मनुष्य का अंत:करण शुद्ध नहीं होगा, तब तक बाह्य व्यवस्थाएं उसे शांति नहीं दे सकतीं। अंतत:, पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य का दर्शन भारतीय ज्ञान परंपरा की वह मशाल है जो प्राचीनता के प्रति गौरव और आधुनिकता के प्रति तार्किक दृष्टिकोण का समन्वय करती है। उनका जीवन और कार्य इस बात का प्रमाण है कि भारतीय मनीषा सदैव गतिशील रही है और वह हर युग की चुनौतियों का सामना करने में सक्षम है। उनका 'युग निर्माण' का स्वप्न वास्तव में एक ऐसी वैश्विक सभ्यता का निर्माण है जहां

विज्ञान के पास पंख हों और अध्यात्म के पास आंखें, ताकि मानव जाति विनाश के गर्त से निकलकर विकास के दिव्य मार्ग पर अग्रसर हो सके। उनकी शिक्षाओं का सार यही है कि व्यक्ति को स्वयं के सुधार से विश्व सुधार की यात्रा प्रारंभ करनी चाहिए, क्योंकि आत्मा का परिष्कार ही परमात्मा की प्राप्ति और विश्व शांति का एकमात्र मार्ग है।

पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य के दर्शन की गहराई को समझने के लिए हमें उनके 'समग्र स्वास्थ्य' और 'मानविकी के रूपांतरण' के सिद्धांत पर विशेष ध्यान देना होगा। भारतीय ज्ञान परंपरा में शरीर को 'धर्मसाधन' माना गया है, और आचार्य जी ने इस विचार को विस्तृत करते हुए यह प्रतिपादित किया कि व्यक्ति का शारीरिक स्वास्थ्य उसके मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। उन्होंने प्राचीन आयुर्वेद के सिद्धांतों को पुनर्जीवित करते हुए यह स्पष्ट किया कि अधिकांश रोगों का मूल कारण मनुष्य की असंयमित जीवनशैली और विकृत चिंतन है। उनके दर्शन में 'संयम' केवल एक धार्मिक शब्द नहीं, बल्कि एक वैज्ञानिक आवश्यकता है–इंद्रिय संयम, अर्थ संयम, समय संयम और विचार संयम। उन्होंने यह तर्क दिया कि यदि मनुष्य अपनी ऊर्जा का अपव्यय रोक दे, तो वह न केवल दीर्घजीवी हो सकता है, बल्कि अपनी सुप्त प्रतिभाओं को भी जाग्रत कर सकता है। भारतीय ज्ञान परंपरा के 'प्राण' तत्व पर उनका शोध यह बताता है कि यह ब्रह्मांडीय ऊर्जा का वह स्वरूप है जो मनुष्य को जीवनी शक्ति प्रदान करता है। उन्होंने साधना के माध्यम से इस प्राण शक्ति के संवर्धन पर बल दिया ताकि व्यक्ति प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अडिग रह सके।

आचार्य जी का शिक्षा दर्शन भी भारतीय ज्ञान परंपरा के 'विद्या' और 'अविद्या' के भेद को स्पष्ट करता है। उनके अनुसार, वर्तमान शिक्षा प्रणाली केवल 'अविद्या' या 'शिक्षा' प्रदान कर रही है, जो जीविकोपार्जन का साधन तो है, लेकिन जीवन जीने की कला नहीं सिखाती। उन्होंने 'विद्या' पर जोर दिया, जो आत्म–बोध और चरित्र निर्माण की प्रक्रिया है। उनका मानना था कि जब तक शिक्षा के साथ दीक्षा (अनुशासन और संस्कार) का समावेश नहीं होगा, तब तक समाज में नैतिक मूल्यों का उत्थान संभव नहीं है। उन्होंने 'युग निर्माण विद्यालयों' और 'बाल संस्कारों' के माध्यम से एक ऐसी पीढ़ी तैयार करने का प्रयास किया जो आधुनिक तकनीक में निपुण हो, किंतु जिसका हृदय भारतीय संवेदनाओं से ओतप्रोत हो। भारतीय ज्ञान परंपरा में 'ऋषि' वह है जो मंत्रों का द्रष्टा है, और आचार्य जी ने आधुनिक युग में 'साहित्य' को ही वह मंत्र माना जो जनमानस के अंत:करण को झकझोर सके। उन्होंने अपनी लेखनी को एक तपस्या की तरह चलाया, जिसका उद्देश्य केवल सूचना देना नहीं, बल्कि पाठक के भीतर एक वैचारिक भूकंप पैदा करना था ताकि वह अपनी सुप्त शक्तियों को पहचान सके।

उनके दर्शन का एक और महत्वपूर्ण स्तंभ 'समाज तंत्र' और 'धर्म तंत्र' का समन्वय है। भारतीय परंपरा में धर्म कभी भी व्यक्तिगत पूजा–पाठ तक सीमित नहीं रहा, वह सामाजिक उत्तरदायित्व का आधार था। आचार्य जी ने इसी 'लोक धर्म' को पुन: स्थापित किया। उन्होंने 'धर्मतंत्र से लोक शिक्षण' के माध्यम से यह संदेश दिया कि मंदिर और धार्मिक संस्थान केवल कर्मकांड के केंद्र न रहकर, समाज सुधार, साक्षरता और लोक–कल्याण के जीवंत केंद्र बनने चाहिए। उन्होंने 'यज्ञ' की वैज्ञानिकता को पर्यावरण शुद्धि से जोड़ा और मंत्र जप की ध्वनि तरंगों को सूक्ष्म जगत के शोध से संबंधित किया। उनका 'ब्रह्मवर्चस' शोध संस्थान इसी दिशा में एक क्रांतिकारी कदम था, जहाँ वेदों के ऋचाओं और आधुनिक विज्ञान के उपकरणों का मिलन होता है। यह संस्थान इस बात का जीवंत प्रमाण है कि भारतीय ज्ञान परंपरा पिछड़ी हुई नहीं, बल्कि भविष्य का विज्ञान है।

आचार्य जी ने 'वसुधैव कुटुंबकम' के आदर्श को केवल एक नारे के रूप में नहीं, बल्कि 'विश्व परिवार' की एक संगठित संरचना के रूप में देखा। उनका मानना था कि राष्ट्रों के बीच की दूरियां और संघर्ष तब तक समाप्त नहीं होंगे, जब तक कि मनुष्य के भीतर 'आत्मीयता' का विस्तार नहीं होगा। उन्होंने 'अपना सुधार–संसार की सबसे बड़ी सेवा' का सूत्र देकर यह स्पष्ट किया कि समाज के परिवर्तन के लिए दूसरों को उपदेश देने के बजाय स्वयं का उदाहरण प्रस्तुत करना अनिवार्य है। उनके दर्शन में 'सेवा' कोई उपकार नहीं, बल्कि आत्म–परिष्कार का एक अनिवार्य अंग है। उन्होंने 'अंशदान' और 'समयदान' की जो परंपरा शुरू की, वह भारतीय ज्ञान परंपरा के 'यज्ञीय' भाव का ही विस्तार है, जहाँ व्यक्ति समाज के ऋण को चुकाने के लिए स्वेच्छा से अपनी सुख–सुविधाओं का त्याग करता है।

अंतत:, पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य का दर्शन भारतीय ज्ञान परंपरा के उस शाश्वत सत्य की आधुनिक व्याख्या है जो कहती है कि मनुष्य केवल हाड़–मांस का पुतला नहीं, बल्कि ईश्वर का साक्षात अंश है। उन्होंने इस 'अमृतत्व' के बोध को जन–जन तक पहुँचाने के लिए अत्यंत सरल भाषा और प्रभावी साधनों का उपयोग किया। उनका पूरा जीवन एक ऐसी प्रयोगशाला था जहाँ उन्होंने प्राचीन आदर्शों को आधुनिक कसौटी पर परखकर सफल सिद्ध किया। आज के सूचना क्रांति और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) के युग में, जब मानव अपनी पहचान खोता जा रहा है, आचार्य जी का 'आत्मिक बोध' और 'मानवीय गरिमा' का दर्शन हमें पुन: जड़ों की ओर लौटने और एक संतुलनपूर्ण भविष्य की रचना करने की प्रेरणा देता है। उनके द्वारा प्रज्ज्वलित 'अखंड ज्योति' केवल एक दीपक नहीं है, बल्कि वह उस विवेक की मशाल है जो अज्ञान के अंधकार को मिटाकर एक नए सतयुग की आधारशिला रखती है। यह दर्शन सिद्ध करता है कि भारतीय ज्ञान परंपरा कालजयी है और पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जैसे मनीषी उस परंपरा के वह सेतु हैं जो अतीत के गौरव को भविष्य की संभावनाओं से जोड़ते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आचार्य, श्रीराम शर्मा। विचार क्रांति अभियान: क्यों और कैसे? युग निर्माण योजना, मथुरा, 2015.
2. गायत्री महाविद्या का तत्वदर्शन। युग निर्माण योजना, मथुरा, 2010.
3. यज्ञ का स्वरूप और उपयोगिता। युग निर्माण योजना, मथुरा, 2012.
4. "About Pandit Shriram Sharma Acharya." All World Gayatri Pariwar, 2024, www.awgp.org.

****